International Journal of Research in Hindi
www.hindijournal.in
ISSN: 2582-3493
Received: 20-06-2021, Accepted: 06-07-2021, Published: 25-07-2021
Volume 3, Issue 3, 2021, Page No. 55-56

जन चेतना के अग्रदूतः धूमिल

अर्चना शर्मा
एसोसिएट प्रोफेसर, हिंदी विभाग, रामजस कॉलेज, दिल्ली विश्वविद्यालय, दिल्ली, भारत

सारांश
प्रस्तुत शोध–आलेख का ध्येय जनवादी चेतना के सिरमौर कवि धूमिल के काव्य की सामजिक चेतना के सन्दर्भ में पड़ताल करना रहा है। समकालीन कविता आंदोलन एवं अकविता आंदोलन के सन्दर्भ में कवि के काव्य की प्रासंगिकता की खोज करना रहा है । यह शोध– आलेख धूमिल के व्यक्तित्व और कृतित्व की समसामयिक उत्तरजीविता की प्रस्तुति का प्रयास है।

मूल शब्दः जन चेतना, प्रगतिशील, अकविता आंदोलन, जनवादी, आपातकाल

प्रस्तावना

प्रगतिशील वैचारिक पृष्ठभूमि से संबद्ध समकालीन कवियों की पंक्ति में सुदामा पांडेय 'धूमिल' को एक साहित्यिक आयाम के मध्य रखकर देखा जाए तो अकविता आंदोलन से संबद्ध तथा जनवादी चेतना से प्रेरित कवियों की श्रेणी में निःसंकोच रखे जाने के हकदार हैं।

1967 ई० के दौर में समकालीन कविता आंदोलन के सापेक्ष एक प्रमुख प्रवृत्ति 'जनवादी कविता' की भी उभरी। उस दौरान समसामयिक फलक पर 'प्रगतिवाद' से प्रभावित कवियों में – नागार्जुन, त्रिलोचन, केदारनाथ अग्रवाल इत्यादि कविताएँ लिख रहे थे। कुछ अन्य समकालीन कवियों की टुकड़ी में प्रमुख तौर पर सर्वहारा वर्ग के समर्थक कवि भी काव्य– कर्म में संलग्न थे। इन कवियों में – शमशेर, रघुवीर, सर्वेश्वर, केदारनाथ सिंह इत्यादि शामिल थे। किंतु 1967 ई० के लगभग चंद आगामी वर्षों में ही अमुक कवि 'जनवाद' से भी गहन रूप से प्रेरित हो चुके थे। उपरोक्त दोनों कवि वर्गों से भिन्न 'अकविता आंदोलन' के चंद हिस्सेदार कवि जोकि 'जनवाद' से भी प्रभावित थे,अपना कवि–कर्म प्रभावी तौर पर लेकर साहित्य धरा पर सम्मुख प्रकट हुए! इनमें मंगलेश डबराल, लीलाधर जगूड़ी, इब्बार रब्बी तथा कुमार विमल इत्यादि कवियों में धूमिल सिरमौर कवि के रूप में प्रमुख थे।

धूमिल का व्यक्तित्व और कृतित्व उस दौर की परिस्थितियों का परिणाम रहा है । यह चरित्र स्वतंत्र भारत का स्वप्न और काग़ज़ी आज़ादी की निरर्थकता से भरा हुआ है। सातवें दशक (1960–1970) के दौरान सामाजिक स्थितियाँ तेज़ी से बिगड़ना शुरू हो चुकी थीं। 1962 ई० का चीन युद्ध तथा 1965 ई० में पाकिस्तान से पुनः युद्ध ने धूमिल के संसार का संपूर्ण चित्र ही बदल दिया। नक्सलवाद की पीड़ा तथा जनक्रांति के प्रति तीव्र आस्था ने धूमिल के रचना संसार पर गहन प्रभाव छोड़ा।

जनवादी कविता के दो प्रमुख चरणों 1967 ई. से 1975 ई. तथा 1975 ई. के पश्चात, ने अकविता के चिंतन, मुहावरे व शैली को बदलकर रख दिया। 1975 ई. के आपातकाल ने क्रांति के स्वप्न व व्यक्तिगत स्वतंत्रता के महल को चकनाचूर कर दिया! यह वो दौर था, जब धूमिल पूर्णतः जनवादी हो चले थे –

"पेशेवर हाथों और फटे हुए जूतों के बीच
कहीं न कहीं एक अदद आदमी है
जिस पर टाँके पड़ते हैं
जो जूते से झाँकती हुई अंगुली की चोट छाती पर
हथौड़े की तरह सहता है।"[1]

धूमिल उस आम व्यक्ति की आवाज़ बनते है जिसे समाज हाशिये पर रखता चलता है। वहीं दूसरी तरफ़ धूमिल में लेखकीय असंतोष का स्वर भी मुखर रूप से विद्यमान दिखता है –

"कल तुम्हारा छोटा लड़का भी
तुम्हारे पड़ोसी का गला
अचानक अपनी स्लेट से काट सकता है।"[2]

साठोत्तरी दौर में यह सब्र टूटने लगा था। इसकी आवाज़ इतिहास के पृष्ठों पर 'सशस्त्र राजनीति' एवं 'सशस्त्र मनोदशा' के रूप में सुनी जा सकती है।

इस पथ पर संसदीय व्यवस्था एवं राजनीतिक परिस्थितियों के प्रति तीव्र आक्रोश का भाव भी झलकता नज़र आता है जिसमें धूमिल संसद की साम्यता तेली की धानी से करते नज़र आते हैं। इनकी कविताओं पर सामाजिक परिवर्तनों की संभावना के प्रति ख़ास प्रकार की आस्था का भाव स्पष्ट रूप से देखा जा सकता है। यूँ तो परिवर्तनों एवं क्रांति के प्रति आस्था की आँच धूमिल के जीवनानुभवों में भी देखी जा सकती है। काशी विश्वविद्यालय के औद्योगिक संस्थान से प्रथम श्रेणी तथा प्रथम स्थान सहित डिप्लोमा प्राप्त करना हो अथवा विद्युत–अनुदेशक के पद पर नियुक्ति का प्रसंग, धूमिल का जीवन उतार–चढ़ाव से भरपूर रहा था। स्वाभिमान के अतिरेक के कारण अन्य समधर्मियों द्वारा किया गया उत्पीड़न, जीवन में ब्रेन ट्यूमर सम रोग लेकर आया तथा प्रज्ञा–पुत्र काल की अनंत गलियों में कहीं खो गया। मरणोपरांत धूमिल को साहित्य अकादमी पुरस्कार से नवाज़ा गया।

अनेक जिज्ञासु 'प्रगतिवाद तथा जनवाद को परस्पर अन्योन्याश्रित समझने का भ्रम हृदय में रखते हैं। किंतु यह दोनों संबंधित होकर भी समानार्थी नहीं हैं। यह अवश्य है कि प्रगतिवादी विचार अग्रिम तौर पर जनवादी चेतना में ही पर्यवसित हो गए किंतु दोनों भिन्न अस्तित्व रखते हैं। हाँ.... इसे प्रगतिवाद का नव–संस्करण अवश्य कहा जा सकता है चूँकि इसके मूल में भी तानाशाही के स्थान पर कृषक, मज़दूर तथा बुर्जुआ वर्ग की व्यवस्था का समर्थन निहित है। अतः धूमिल कृतित्व के आयामों में वैकल्पिक व्यवस्था की प्रतिष्ठापना करने का प्रयास करते हैं जिसमें पाशविकता का कोई स्थान नहीं हैं। वर्तमान समय में धूमिल का काव्य हीन–दीन भावना को तिलांजलि देकर स्वाभिमान के साथ जीवन जीने का संदेश देता है –

"इसलिए मैं फिर कहता हूँ कि हाथ में
गीली मिट्टी की तरह – हाँ हाँ– मत करो
तनो
अकड़ो
अमरबेलि की तरह मत जिओ,
जड़ पकड़ो।"[3]

निष्कर्ष

अस्तुः जन चेतना के आईने में धूमिल का रचनाकर्म समानांतर वैकल्पिक सात्विक व्यवस्था की स्थापना सहित मानवीयता की आधारशिला को प्रतिष्ठापित करता चलता है। कवि काव्य की प्रेरणा का आधार स्रोत मानवीयता को बनाता है। इसका रक्षण पाठकीय वर्ग का दायित्व बन जाता है।

संदर्भ सूची

1. कटघरे का कवि धूमिलः: ग० तु० अष्टेकर (संपादक): प्रथम संस्करणः 1984: पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ–153
2. संसद से सड़क तकः: धूमिल, पृष्ठ–10
3. कटघरे का कवि धूमिलः ग० तु० अष्टेकर (संपादक): प्रथम संस्करणः 1984: पंचशील प्रकाशन, जयपुर, पृष्ठ–174